वार्षिक शुल्क रु. ३०/-
आजीवन शुल्क रु. ५००/-

बुद्धवर्ष २५५०, फाल्गुन पूर्णिमा, ३ मार्च, २००७ वर्ष ३६ अंक ९

Hindi Patrika on Website: www.vri.dhamma.org/NewslettersHindi/index.html

धम्मवाणी

न हेतदत्थाय मतस्स होति, यं जीवितत्थं परपोरिसानं।
मतम्हि रुण्णं न यसो न लोक्यं, न वण्णितं समणब्राह्मणेहि॥

– थेरगाथा, महाकप्पिन - ५५४

–रोने से न मृत व्यक्ति का भला होता है, न जीवितों का। दोनों की ही हानि होती है। मृतक के लिए रोने से न यश बढ़ता है और न चित्तशुद्धि होती है। इसीलिए श्रमण और ब्राह्मण इसे अच्छा नहीं कहते, इसकी प्रशंसा नहीं करते।

अलविदा अनुज राधेश्याम

मेरे पूज्य पिता श्री गोपीरामजी के ज्येष्ठ भ्राता यानी मेरे ताऊजी श्री द्वारकादासजी की आयु बढ़ती जा रही थी और शरीर भी अस्वस्थ रहने लगा था। उनके कोई पुत्र नहीं था। जीवन में एक-के-बाद-एकसात पुत्रियों ने ही जन्म लिया। पिताजी को उनके बारे में चिंता थी कि उनके एक भी पुत्र न होने से उनका वंश कैसे चलेगा? इसी चिंता के कारण उन्होंने अपने पहले पुत्र बालकृष्ण को अपने अन्य ज्येष्ठ भ्राता श्री रामेश्वरजी के गोद दे दिया था, क्योंकि उनके कोई संतान ही नहीं थी। न पुत्र, न पुत्री। उनके मन में बड़े भाइयों के प्रति असीम आदरभाव था। अपने बड़े भाई द्वारकादासजी को इस दुःख से मुक्त करने के लिए उन्होंने मुझे उनको गोद दिये जाने का निश्चय किया। यह सन १९३७ का वर्ष था और मैं तब तेरह वर्ष का हो चुका था। किसी शिशु को अपने जन्मदाता और जन्मजननी से दूर करके किसी अन्य को गोद दिया जाना सरल होता है लेकिन तेरह वर्ष की उम्र में मेरे लिए इसकी कल्पना मात्र भी असह्य थी। मेरा बड़ा भाई बाबूलाल मुझसे डेढ़-दो वर्ष बड़ा था लेकिन हम सदा जुड़वा भाइयों की तरह साथ रहते थे। मेरी जन्मदायिनी माता, जो सदा वात्सल्यभावों से ओत-प्रोत रहती थी, उसका मुझसे और मेरा उससे बड़ा लगाव था। उस छोटी उम्र में भी मुझे वर्ष में एक या दो बार माइग्रेन का असह्य आक्रमण हो जाया करता था। इसके कारण वह बहुत दुःखी होती थी। ऐसी अवस्था में वह मुझे लेटा कर मेरा सिर अपनी गोद में रख लेती थी और कभी ताजा मक्खन से, कभी बादाम के तेल से थोड़ी देर थपथपाती थी। उसका यह प्यारभरा थपथपाना आश्चर्यजनक परिणाम लेकर आता था। कुछ देर में ही मेरे सिर में झनझनाहट शुरू हो जाती थी जो कि सारे शरीर में फैल जाती थी। यह एक प्रकार से आगामी विपश्यना का पूर्वाभास था, जो मेरी माता के ममताभरे स्पर्श से महसूस होता था। इससे दर्द का नामोनिशान नहीं रहता और मैं मां की गोद में सिर रखे-रखे ही सो जाता। ममतामयी मां का अश्रुमुख चेहरा खिल उठता। अपनी ऐसी मां से दूर होने की चर्चा तक मुझे असह्य लगती।

एक दिन पिताजी ने अपने बड़े भाई को दुःखमुक्त करने की अपनी जिम्मेदारी मुझे समझायी। ताऊजी पिताजी से उम्र में बहुत बड़े थे। वे पिताजी को बहुत प्यार करते थे। व्यापार के गुर सिखाते थे और जहां कहीं कठिनाई आती उसे वे स्वयं सुलझाते थे। उन्हें हल्के-फुल्के काम देकर प्रसन्न रखते थे। सभी कठिनाइयोंभरे व्यापारिक काम –जैसे हाटों तक उत्तरी प्रदेशों में जाकर कपड़ा बेच कर आना आदि स्वयं करते थे। अब उन्हें एक पुत्र की आवश्यकता है। तुम्हें पाकर वे प्रसन्न रहेंगे। और हम सब एक मकान में ही तो साथ-साथ रहते हैं और रहेंगे। तुम हमसे दूर तो नहीं हो रहे हो।

अपने बड़े भाई के प्रति उनकी असीम श्रद्धा और उनके उपकारों से द्रवीभूत हुई उनकी वाणी सुन कर मैं जरा भी विरोध नहीं कर सका। और फिर यह भी देखता था कि मेरे ताऊजी देवता सदृश, अनुत्तेजित प्रकृति के व्यक्ति हैं और ताई मां तो किसी देवी की सजीव प्रतिमा सदृश सदा शांत रहने वाली। मैंने आगे जाकर भी जीवन भर उसे कभी ऊंची आवाज में कुछ कहते हुए नहीं सुना। पिताजी की यह बात भी समझ में आयी कि आखिर साथ ही तो रहते हैं। भाई बालकृष्ण की तरह कहीं दूर तो जाना नहीं। अतः मैंने पिताजी के निर्णय को स्वीकार कर लिया।

गोद दिये जाने वाली इस घटना के लगभग एक-डेढ़ वर्ष पश्चात ताई मां ने राधेश्याम को जन्म दिया। यह देख कर मेरा मन प्रसन्नता से भर उठा। साथ-साथ एक मचलन भी उठी और मैं पिताजी के पास जाकर उनसे आग्रह करने लगा कि अब तो ताऊजी का वंश चलाने के लिए उन्हें पुत्र प्राप्त हो गया है। अब मुझे वापस ले लीजिये। मुझे वहां कोई दुःख नहीं है परंतु अपनी मां से जरा भी दूर रहना मेरे लिए असह्य है। इस बार पिताजी जरा कठोर हो गये। उन्होंने कहा –तुम देखते हो, ताऊजी कितने अस्वस्थ रहते हैं। न जाने कब इनका शरीर शांत हो जाय। (और सचमुच लगभग एक वर्ष पश्चात उनका शरीर शांत हो ही गया।) अब तो तुम्हें विशेष रूप से जिम्मेदारी सँभालनी है। अपने ताऊजी के परिवार की देखभाल करनी है, उनकी सेवा करनी है। अपनी जिम्मेदारी से दूर नहीं भागना है। मैंने तुम्हें जो जिम्मेदारी दी है वह खूब सोच-समझ कर दी है। उसे पूरा करना तुम्हारा कर्तव्य है।

मुझ पर बचपन से ही रामचरित मानस का गहरा प्रभाव था। माता-पिता को छोड़ कर वनवास जाते हुए राम को बार-बार याद करते हुए मेरा मन पितृभक्ति के आदर्श भावों से भर उठता था। सारा राजपाट छोड़ देना और वन में निवास करना कोई साधारण बात नहीं थी। पर पिता की आज्ञा तो पिता की आज्ञा।

राजीवलोचन राम चले, तजि बाप को राज बटाऊ की नाई।...

इस पद को गाते-गाते मैं विह्वल हो जाया करता था। आज मेरे

सामने मेरे पिता की आज्ञा है कि मैं उनके बड़े भाई के परिवार की सेवा करूं। अब यही मेरे लिए सौभाग्य की बात है। मैंने उनकी आज्ञा शिरोधार्य की। इसके बाद कभी मन में नहीं आया कि मैं पुनः अपनी ममतामयी मां की गोद में जा बैठूं।

सन १९४० में मैट्रिक तक की पढ़ाई पूरी करके मैं काम में लग गया और दो वर्ष बीतते-बीतते जापानी युद्ध के कारण बर्मा छोड़ना पड़ा। भारत में आकर अत्यंत कठिनाई का जीवन जीना पड़ा, क्योंकि बहुत कुछ संपदा बर्मा में ही छूट गयी थी। जहां एक ओर काम-धंधे की खोज में लग गया वहीं दूसरी ओर ताई मां और उसके परिवार की देखभाल के साथ राधेश्याम को पढ़ाई में लगाया। वह पढ़ाई में कुशाग्रबुद्धि था, अतः आसानी से आगे बढ़ता गया। व्यापार करने के निमित्त दक्षिण में बसे तो वहां भी उसकी पढ़ाई चालू रही। फिर जापानी युद्ध के बाद बर्मा लौटे तब वहां भी उसकी पढ़ाई चालू रही। उसकी तीव्र इच्छा थी कि वह इंजीनियर बने। मुझे इस बात का दुःख था कि मैट्रिक की परीक्षा में बर्मा में सर्वोच्च अंक प्राप्त करने पर और सरकार की ओर से वजीफा मिलने पर भी मुझे कालेज की पढ़ाई का अवसर नहीं मिला। अतः मैंने यह निश्चय किया कि राधेश्याम की पढ़ाई पर कोई प्रतिबंध नहीं होगा। जितना चाहे, जब तक चाहे पढ़े। कुछ समय बाद उसने पिलानी की बिड़ला कालेज से इंजीनियरिंग कर ली और बर्मा आकर हमारे साथ व्यापार में जुट गया।

एक बार फिर बर्मा छोड़कर भारत जाना पड़ा, वह व्यापार में परिवार के साथ जुटा रहा। बर्मा में गुरुदेव का आशीर्वाद लेकर सन १९६९ में विपश्यना सिखाने का उत्तरदायित्व लेकर मैं भारत आया था। शिविर भी लगने लगे थे। परंतु यह जिम्मेदारी कैसे निभा पाऊंगा, इसकी चिंता थी? इतने में बोधगया शिविर लगाते हुए यह सूचना मिली कि परम पूज्य गुरुदेव ने शरीर त्याग दिया। तब मैंने वहीं दस दिन का एक स्वयं शिविर किया और तत्पश्चात निश्चय किया कि अब मुझे व्यापार, परिवार आदि की सभी जिम्मेदारियों से मुक्त होकर अपना शेष जीवन विपश्यना में ही लगाना है। मैंने अपना यह संकल्प अपने भाइयों को लिखा। औरों के तो उत्साहवर्धक उत्तर आये ही, परंतु राधेश्याम और छोटा भाई गौरीशंकर दौड़े-दौड़े बोधगया पहुँचे – मुझे आश्वासन देने के लिए कि मुझे व्यापार की और परिवार की चिंता नहीं करनी चाहिए। मैं अपने धर्मकार्य में लगा रहूं। मैं निश्चिंत होकर अपने धर्मकार्य में लगा रहा। लेकिन इस काम में भी प्रिय राधेश्याम का पूरा सहयोग रहा। वह अपने काम-धंधे की जिम्मेदारियों को निभाते हुए विपश्यना के हर क्षेत्र में यथाशक्ति सहयोग देता रहा। उसका सबसे बड़ा सहयोग जो मुझे सदा याद रहेगा और सभी विपश्यी साधकों को भी याद रहेगा, वह यह था कि उसने मेरी एक प्रबल मनोकामना पूरी की थी। जैसे भारत की खोयी हुई विपश्यना विद्या बर्मा से वापस आकर यहां फले-फूले, वैसे ही भगवान बुद्ध की मूल वाणी भी भारत में प्रकाशित हो और इससे अधिक से अधिक लोग लाभ उठायें। इस काम के लिए **'विपश्यना विशोधन विन्यास'** का गठन किया गया और राधेश्याम ने इसके संचालन की जिम्मेदारी संभाली।

इस कार्य में एक कठिनाई उत्पन्न हुई। तिपिटक का सारा साहित्य तैयार होने पर भी मुद्रित होकर प्रकाशित नहीं हो पा रहा था। जिन-जिन लोगों ने यह काम लिया, सभी असफल हुए। आखिरकार राधेश्याम ने इस काम को अपने जिम्मे लिया और तिपिटक का सारा साहित्य बहुत सुंदर ढंग से मुद्रित करवाकर, बहुत सुंदर पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया। यह उसकी बहुत बड़ी देन है भारत के लिए।

सारे तिपिटक तथा तत्संबंधित समस्त पालि साहित्य की सीडी-रोम तैयार करने का काम भी उसने अपने जिम्मे लिया और उसे भलीभांति निभाया। सीडी-रोम में ऐसे प्रोग्राम बनाये, जिनके द्वारा एशिया की सात लिपियों में प्रकाशन का काम हो सके और चाहे तो अलग-अलग सीडी-रोम तैयार किये जा सकें। ऐसा सर्च-प्रोग्राम बनवाया जिससे सारे तिपिटक में अनेक प्रकार के शोधकार्य संपन्न हो सकें। एक और दूसरा बड़ा काम किया कि जो-जो विपश्यना संबंधी पुस्तकें प्रकाशन के लिए तैयार होतीं, वह जिम्मेदारी के साथ उनका मुद्रण और प्रकाशन करवाता रहा। इस प्रकार विपश्यना के विपुल साहित्य के सुंदर प्रकाशन करके महान पुण्य अर्जित किया। घर में मेरे साथ ही रहता था, इसलिए प्रकाशन-क्षेत्र के हर कार्य में वह मेरे निर्देशों का पूर्णतया पालन करता था।

अभी पिछले दिनों एक ऐसी आवश्यकता आ पड़ी कि दो पुस्तिकाएं एक सप्ताह के भीतर छपा कर प्रकाशित करनी थीं। पुस्तिकाएं मैं लिख रहा था परंतु अस्वस्थ होने कारण वह पूरी नहीं हो पा रही थीं। कैसे समय पर प्रकाशित हो पायेंगी? राधेश्याम ने इन्हें छपाने और प्रकाशित करने का उत्तरदायित्व अपने सिर पर लिया था। लेकिन पूर्व निश्चित कार्यक्रम के अनुसार उसे भोपाल जाना था। जाते-जाते उसने मुझे पुनः आश्वासन दिया कि सब कुछ तैयार है। आप चिंता न करें। आप मटीरियल प्रेस में भिजवा दें। दो दिन में पुस्तिकाएं निकल जायँगी। मुझे विश्वास नहीं हो रहा था – कैसे निकल जायगी? मुंबई छोड़कर भोपाल पहुँचने के पूर्व ही यात्रा में उसका शरीर शांत हो गया। जाते-जाते भी यही कह गया था कि चिंता न करें, पुस्तिकाएं तैयार हो जायँगी। और सचमुच उसके चले जाने के दो दिनों के बाद उसके सहयोगी मुद्रक ने मेरी इच्छा के अनुसार दोनों पुस्तिकाएं तैयार करके मेरे हाथ में पकड़ा दीं।

धर्म के क्षेत्र में अपनी जिम्मेदारी निभाता हुआ वह महाप्रयाण कर गया। उसने धर्म के क्षेत्र में जो भी सेवाएं दीं, वे उसकी भावी भवयात्रा में सहयोगी होंगी। वह उत्तरोत्तर मुक्ति की ओर बढ़ता जाय – यही धर्म कामना है, मंगल कामना है, कल्याण कामना है।

कल्याणमित्र,

स.ना.गो.

ग्लोबल विपश्यना पगोडा का उद्देश्य

ग्लोबल विपश्यना पगोडा के निर्माण का एक महत्त्वपूर्ण भाग पूरा हुआ। लेकिन पगोडा बनने का काम अभी बाकी है जो कि शीघ्र-से-शीघ्र पूरा होना चाहिए। पगोडा का मुख्य उद्देश्य कृतज्ञताज्ञापन है यथा –

१. भगवान बुद्ध के प्रति कृतज्ञता, जिन्होंने अनेक जन्मों में सारी पारमिताएं परिपूर्ण करके बुद्धत्व प्राप्त किया। उन्होंने विपश्यना विद्या को खोज करके न केवल अपना कल्याण किया, बल्कि सारे विश्व का कल्याण किया।

२. कृतज्ञता भगवान के उन प्रज्ञावान शिष्यों के प्रति जिन्होंने उनसे यह विद्या सीख कर न केवल अपना कल्याण किया, बल्कि अनेकों के कल्याण में सहायक हो गये और पीढ़ी-दर-पीढ़ी इस विद्या को कायम रखने का बीड़ा उठाया और भदंत मोग्गलिपुत्त तिस्स के समय तक इसे अक्षुण्ण रूप से जीवित रखा।

३. भदंत मोग्गलिपुत्त तिस्स और सम्राट अशोक के प्रति विशेष कृतज्ञता, क्योंकि उन्होंने संपूर्ण रूप से शुद्ध बुद्धवाणी और विपश्यना

विद्या को पड़ोसी देशों में भेजा। अशोक के लगभग ५० वर्ष बाद भारत में एक दुर्भाग्य का समय आया और इन दोनों का ह्रास होते-होते दोनों पूर्णतया विनष्ट हो गयीं।

४. यदि अशोक ने पड़ोसी देशों में न भेजा होता तो जैसे भारत में लुप्त हो गयीं, वैसे सारे विश्व में लुप्त हो जातीं। हममें से किसी को नहीं उपलब्ध होतीं। अतः उपकार मानते हैं अशोक का, और उपकार मानते हैं लंका, बर्मा, थाईलैंड, कंबोडिया, लाओस आदि देशों का, जिन्होंने भगवान की वाणी को शुद्ध रूप में पीढ़ी-दर-पीढ़ी, गुरु-शिष्य परंपरा से कायम रखा। इसमें कुछ तब्दीली नहीं आने दी।

५. कृतज्ञता प्रकट करते हैं बर्मा के उन आचार्यों का, जिन्होंने शुद्ध रूप में विपश्यना की व्यावहारिक विद्या को संभाल कर रखा। उसमें कहीं जरा भी रद्दोबदल किये बिना, इसे कायम रखा तो ही हमें प्राप्त हुई। वाणी प्राप्त हुई, विद्या प्राप्त हुई। हमारा कल्याण हुआ, लोगों का कल्याण हुआ। यदि वे न संभाल कर रखते तो अशोक ने भेजा तब भी काम न आती।

६. कृतज्ञता प्रकट करता हैं सयाजी ऊ बा खिन के प्रति, जिनके मन में इस बात की गहरी लगन थी कि यह विद्या भारत लौटे। भारत ने यह अनमोल रत्न गँवा दिया है। वहां मूल बुद्धवाणी और विपश्यना विद्या वहां जानी ही चाहिए। एक मान्यता चली आ रही है कि २५०० वर्ष पूरे होने पर यह विद्या बर्मा से भारत आयेगी और वहां से पूरे विश्व का कल्याण करेगी। अतः उन्होंने इसे पूरा करने का दृढ़ निश्चय किया और अपने धर्मपुत्र को इस कार्य के योग्य बना कर भारत भेजा। उनके इस उपकार को हम कभी नहीं भूल सकते। यह पगोडा एक प्रकार से उनकी स्मृति और कीर्ति का गगनचुंबी प्रतीक होगा।

भगवान बुद्ध की सार्वजनीन शिक्षा

एक और महत्वपूर्ण बात यह कि भगवान बुद्ध ने बौद्ध धर्म नहीं सिखाया, धर्म सिखाया। बौद्ध धर्म केवल बौद्धों का होता है। धर्म सब का होता है। धर्म सिखाया इसीलिए सभी संप्रदाय के लोग उसे स्वीकार करते हैं। संसार का कोई संप्रदाय नहीं है जिसके कि अनुयाई इसे स्वीकार न करते हों। शिविरों में सब जाति के वर्ण के, गोत्र के, संप्रदाय के लोग शामिल होते हैं। इसका एक बहुत बड़ा ज्वलंत उदाहरण इस पगोडा में होगा, जहां ८-१० हजार लोग एक साथ बैठ कर ध्यान करेंगे, जिसमें सब जाति, वर्ग और संप्रदाय के लोग होंगे। उनमें कोई भेदभाव नहीं होगा। इससे यह स्पष्ट हुआ कि बुद्ध ने सब के लिए धर्म सिखाया, केवल बौद्धों के लिए नहीं सिखाया। इसलिए यह जो गलत बात चल पड़ी, इसका निराकरण करने में यह पगोडा प्रमुख भूमिका निभायेगा।

बुद्धकालीन घटनाओं की झांकियां/चित्रकथाएं

इस पगोडा की दूसरी विशेषता यह होगी कि यहां बुद्धकालीन ऐतिहासिक घटनाओं की झांकियां प्रस्तुत की जा रही हैं जो इस बात को सिद्ध करेंगी कि उन्होंने लोगों को सही माने में प्रज्ञा में स्थित होना सिखाया। स्थितप्रज्ञ होने की ही शिक्षा दी। उन्होंने शील, समाधि और प्रज्ञा द्वारा विपश्यना का अभ्यास करना सिखाया। विपश्यना का अर्थ ही प्रज्ञा में स्थित होना है। वे स्वयं प्रज्ञा में स्थित हुए और उनके बताये मार्ग पर चलने वाले लोग किस प्रकार प्रज्ञा में स्थित हुए – ये बातें झांकियों/चित्रकथाओं में स्पष्ट रूप से दर्शायी जायँगी। इससे उनके जीवनकाल के अनेक शिष्य किस प्रकार प्रज्ञा में स्थित हुए, उनके

Postal Regn. No. LII/REN./RNP-46/2006-08

Postal Licence No. LII/RNP-WPP-03

उदाहरण दिखाये जायेंगे। इससे बुद्ध की शिक्षा का एक महत्वपूर्ण पक्ष प्रकाश में आयेगा और उनके बारे में फैली गलतफहमियां दूर होंगी।

इन सारी बातों को ध्यान में रखते हुए हमारा लक्ष्य यही होना चाहिए कि यह कार्य जितनी जल्द पूरा हो जाय, उतना ही अच्छा।

अब तक पगोडा का एक तिहाई कार्य पूरा हुआ है जो कि लगभग १०० फुट की ऊंचाई तक पहुँचा है। इसके ऊपर अभी दो तिहाई काम होना शेष है। जैसे-जैसे ऊपर जायेंगे, पत्थरों की संख्या भले कम होती जाय, परंतु नक्कासी और ऊंचाई के कारण औसत खर्च लगभग उतना ही आयेगा। इसके निर्माण में प्रति पत्थर लागत लगभग (पत्थर को लाने, गढ़ कर तैयार करने और लगाने तक की) छोटे आकार की रु. ५,०००/-, मध्यम आकार की रु. १०,०००/-, बड़े आकार की रु. १५,०००/- तक आती है। कोई चाहे तो एक या एकाधिक पत्थरों का योगदान करके भगवान बुद्ध की शिक्षा को उसके सही परिप्रेक्ष्य में फैलाने के महत पुण्यार्जन का भागीदार बन सकता है।

सब का मंगल हो!

धम्मगिरि पर विशिष्ट धर्मसेवकों की आवश्यकता

धम्मगिरि पर अस्थाई रूप से प्रोग्रामिंग संबंधी काम करने के लिए ASP.NET,SQL SERVER, VB.NET, C# के जानकार प्रोग्रामर की आवश्यकता है। इच्छुक व्यक्ति श्री धनेश शाह, मो. ९८२१०९७९८७ से शीघ्र संपर्क करें।

यदि आप "ग्लोबल विपश्यना पगोडा" को अनुदान देना चाहते हैं तो कृपया– ट्रेजरर, **ग्लोबल विपस्सना फाउंडेशन,** द्वारा- खीमजी कुंवरजी एंड कंपनी, ५२, बॉम्बे म्यूच्युअल बिल्डिंग, सर पी. एम. रोड, मुंबई-४००००१. (फोनः ९१-२२- २२६६ २५५०, फैक्सः २२६६४०४५), **ई-मेलः** kamlesh@khimjikunverji.com के पास डाक से निम्न प्रकार से फॉर्म भर कर भेज सकते हैं।

(कृपया नकद न दें। चेक और ड्राफ्ट मुंबई में देय होना चाहिए।)

नामः ....

चेक क्र.:... रु. ....

पताः..

फोनः..

डिमांड ड्राफ्ट नं.: .... रु. ....

ई-मेलः... हस्ताक्षरः..................................

दोहे धर्म के

सतत प्रवाहित हो रही, तन की मन की धार।
यहां न स्थिर कुछ दीखता, यह बहता संसार॥

पल पल क्षण क्षण जगत को, रहा काल गटकाय।
पक्के पक्के झड़ गये, कच्चे पकते जायँ॥

नारी हो या पुरुष हो, युवा वृद्ध या बाल।
आठ पहर चौंसठ घड़ी, पल पल निगले काल॥

पुष्प-पल्लवित डाल पर, लिपटा विषधर व्याल।
जीवन की मुस्कान पर, छाया काल कराल॥

पुत्र न रक्षा कर सके, पिता न माता भ्रात।
कौन बचा पाए भला, काल करे जब घात?

भोला यह ना समझता, जीवन दो दिन और।
जैसे ही यह समझ ले, कलह स्वयं दे छोड़॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा.) लिमिटेड
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई-४०० ०१८
फोनः २४९३ ८८९३, फैक्सः २४९३ ६१६६
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

अवसर आयो धरम रो, मत सरका मत टाळ।
कुण जाणै कल के हुवै, सिर पर बैठ्यो काळ॥

पल पल छिन छिन जगत नै, काळ रह्यो गटकाय।
पाका पाका झड़ गया, काचा पकता जाय॥

राख तयारी जाण री, रगड़ा-झगड़ा छोड़।
कुण जाणै कद आवसी, म्रित्यू ताबड़तोड़॥

लिखा-पढी कीं री हुयी, म्रित्युराज रै साथ।
कुण जाणै जाणो पड़ै, कीं छण खाली हाथ॥

यो ना अपणो गांव है, यो ना अपणो देस।
कुण जाणै कद आवसी, देसूंटो संदेस॥

क्यां पर तूं करड़ो हुयो, क्यां री राखै टेक?
के जाणै कीं छण मिलै, म्रित्युराज संदेस॥

आकांक्षा इंटरप्राईसेस
ई - १/८२, अरेरा कालोनी, भोपाल (म. प्र.) - ४६२०१६
फोनः (०७५५) २४६१२४३, २४६२३५१; फैक्सः (०७५५) २४६८१९७
Email: aeent@airtelbroadband.in
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) २४४०८६, २४४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५५०, फाल्गुन पूर्णिमा, ३मार्च, २००७**

वार्षिक शुल्क रु. ३०/-, विदेश में US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. ५००/-, " US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. १९१५६/७१.** Regn. No. LII/REN./RNP-46/2006-08

Licenced to post **without Prepayment of postage** -- Licence number-- LII/RNP-WPP-03
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (०२५५३) २४४०७६, २४४०८६
फैक्स : (०२५५३) २४४१७६
e-mail: info@giri.dhamma.org
Website: www.vri.dhamma.org